International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

प्रगतिवादी काव्यधारा–प्रेरणा स्त्रोत और मुख्य प्रवृतियाँ

Umashankar Ray

M.A Hindi (UGC NET&JRF), Department Of Hindi, Lalit Narayan Mithila University, Directorate Of Distance Education-Darbhanga,Bihar

शोध सारः

'प्रगति' का सामान्य अर्थ है– 'आगे बढ़ना और 'वाद' का अर्थ है– सिद्धान्त। इस प्रकार प्रगतिवाद का सामान्य अर्थ है 'आगे बढ़ने का सिद्धांत ।' लेकिन प्रगतिवाद में इस 'आगे बढ़ने का एक विशेष ढ़ंग है, विशेष दिशा है जो उसे विशिष्ट परिभाषा देता है। इस अर्थ में 'प्राचीन से नवीन की ओर 'आदर्श से यथार्थ की ओर' , 'पूँजीवाद से समाजवाद की ओर, 'रूढ़ियों से स्वच्छंद जीवन की ओर 'उच्चवर्ग से निम्नवर्ग की ओर तथा 'शांति से क्रांति की ओर बढ़ना हीं प्रगतिवाद है।

परंतु हिन्दी साहित्य में प्रगतिवाद एक विशेष अर्थ में रूढ़ हो चुका है। जिसके अनुसार प्रगतिवाद को मार्क्सवाद का साहित्यक रूप कहा जाता है। जो विचारधारा राजनीतिक क्षेत्र में साम्यवाद या मार्क्सवाद कहलाती है, वही साहित्यिक क्षेत्र में प्रगतिवाद के नाम से जानी जाती है। इसी प्रगतिवाद को 'समाजवादी यथार्थवाद (सोशलिस्ट रियलिज्म) भी कहते है।'

मुख्य शब्दः– परिस्थितिप्रसूत , प्रयोगधर्मिता , यर्थाथवादी , सौंदर्याभिव्यक्ति , प्रतिक्रियावादी , अट्टालिका , समाजवादी यथार्थवाद आदि।

प्रगतिशील लेखक-संघः-

अप्रैल 1936 ई0 में प्रगतिशील लेखक–संघ की स्थापना के लिए लखनऊ में प्रथम प्रगतिशील लेखक सम्मेलन आयोजित किया गया और इसके अध्यक्ष प्रेमचन्द्र बनाए गए। अध्यक्षीय भाषण में प्रेमचन्द्र ने साहित्य के उद्देश्य, उसकी परिभाषा, सौंदर्याभिव्यक्ति पर बल देते हुए कहा कि–''साहित्य का उद्देश्य केवल व्यक्तिगत विकास और मनोरंजन नहीं है। साहित्य का उद्देश्य समाज कल्याण होना चाहिए।'' उन्होंने साहित्य को दलित, पीड़ीत तथा वंचितों के निकट लाने के लिए सम्मेलन में आये प्रगतिशील लेखकों से निवेदन किया। सौंदर्य की कसौटी बदलने पर बल देते हुए उन्होंने कहा कि जो वस्तु अमीर के लिए सुख का साधन है वह गरीब के लिए दुःख का कारण भी हो सकती है।

इसके साथ हीं अधिवेशन में प्रगतिशील लेखक–संघ के उद्देश्यों को एक घोषणा पत्र के रूप में वितरित किया गया। उस घोषणा पत्र में मुख्य रूप से चार बातों पर बल दिया गया था।

1. स्वतंत्रता और स्वतंत्र विचारों की रक्षा करना।
2. प्रगतिशील लेखक और अनुवादकों को प्रोतसाहित करना व प्रतिक्रियावादी प्रवृतियों के विरूद्ध संधर्ष को आगे बढ़ाना।
3. प्रगतिशील लेखकों की सहायता करना।
4. भारत के तमाम प्रगतिशील लेखकों की संरचना संगठित करना और साहित्य छापकर अपने उद्येश्यों का प्रचार करना।

इस प्रकार प्रगतिशील लेखक–संघ वृहत उद्येश्यों से परिचालित होकर नवलेखन को प्रोत्साहित करने में एक ऐतिहासिक भूमिका अदा कर रहा था। 'प्रगतिशील लेखक–संघ' का विस्तार समूचे देश में हूआ और समय–समय पर इसके सम्मेलन भी होते रहे। इस नवीन विचारधारा को कई पत्र–पत्रिकाओं का सहयोग मिला। सबसे पहले हंस ने प्रगतिशील लेखक–संघ के उद्येश्य, उसके सम्मेलनों की रिपोर्ट प्रकाशित करना आरम्भ किया । 1938 ई0 में 'रूपाभ' के माध्यम से नई साहित्यधारा को बल मिला। रूपाभ के अलावा अमृतलाल नागर के सम्पादन में 'चकल्लस' नामक व्यंगय और हास्य प्रधान साप्ताहिक पत्रिका प्रकाशित हुआ।

प्रगतिवादी काव्यधारा के प्रमुख कवि– नागार्जून, केदारनाथ अग्रवाल, रांगेय राघव, रामविलास शर्मा, त्रिलोचन शास्त्री, शिवमंगल सिहं 'सुमन' आदि के नाम उल्लेखिनीय है।

प्रगतिवादी काव्य–धारा के प्रेरणा–स्त्रोत–

साहित्य समाज का दर्पण है। समाज में होनें वाली प्रत्येक घटना सहित्य का रूप धारण कर लेती है। विश्व साहित्य की किसी भी काव्य–धारा का जन्म आनायास एक आकस्मिक घटना के रूप में कभी नही हूआ। प्रत्येक धारा परिस्थितिप्रसूत होती है। ये परिस्थितियाँ निम्न रूप से हो सकती है।

युगीन परिवेश

- भारत की विपरित राजनीतिक परिवेश और राष्ट्रीयता का हमारे जीवन और साहित्य पर गहरा प्रभाव पड़ना स्वभाविक था। इसी स्थिति ने हमारे जीवन और साहित्य की पूर्व धारा को मोड़कर 'प्रगतिवाद' को जन्म दिया, और फिर 'प्रगतिवादी' साहित्य का सृजन अनिवार्य हो गया।
- हमारा सामाजिक परिवेश तथा विषमताएँ भी 'प्रगतिवाद' को जन्म देने के लिए सहयोगी है। हमारा सामाजिक परिवेश मुख्य रूप से बहुत से पहापुरूषों के विचारों से प्रभावित हुई है। इनमें से कुछ प्रमुख महापुरूष हैः– स्वामी रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।
- साहित्यिक परिवेश और प्रगति–चेतना भी 'प्रगतिवाद' को जन्म देने के लिए सहयोगी रही है। उन्नसवीं शताब्दी में पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन पर्याप्त संख्या में होने लगाा था। इससे नए विचारों का ग्रहण और रूढ़ियों के त्याग की दिशा में एक राष्ट्रिय जीवन में भी बदलाव आया। छापेखाने के प्रसार के कारण साहित्यकारों को व्यक्तिगत अभिव्यक्ति का अवसर भी मिला। इसलिए आधुनिक काल के साहित्य में विविधता, वैक्तिक कल्पना, बौद्धिक्ता और प्रयोगधर्मिता का विकास हुआ। साहित्य और कला संबंधी आंदोलनों को भी छापेखाने के कारण हीं अभिव्यक्ति मिल सकी।
- आर्थिक परिवेश और कृषक आन्दोलन का हमारे जीवन और साहित्य पर गहरा प्रभाव पड़ना स्वभाविक था। इसी स्थिति ने हमारे जीवन और साहित्य की पुर्वधारा को मोड़कर प्रगतिवाद को जन्म दिया।

विदेशी चिंतन धाराओं का प्रभावः–

हिटलर, मुसोलिनी की क्रुरता एवं अंग्रजों के कटु व्यवहार ने भारतीय जन–जीवन को अधिकाधिक यर्थाथवादी बना दिया था। भारतीय अपने अधिकारों और स्वतंत्रता के लिए सचेत हो गए थे। मार्क्सवादी साम्यवादी दल के बढ़ते प्रवाभ से तत्कालिन कवि और साहित्यकार प्रभावित होने लगे और हिन्दी साहित्य में नये विचारधारा का अभ्यास होने लगा।

छायावाद का प्रभावः–

छायावादी काव्य में प्रेम था, श्रृंगार था, नवीन कल्पनाओं का समावेश था और वैयक्तिकता की प्रधानता थी, किन्तु उसे सर्वथा समाजिकता से रिक्त और जीवन से दूर नहीं किया जा सकता। युग–जीवन की विषमताओं, विवशताओं और निराशा ने छायावादी कवियों को व्यक्तिवादी बना दिया था। छायावादी युग के उत्तरकाल में हमें काव्य के छह रूप दिखाई देते है –

श्रृंगार काव्य, मानवतावाी काव्य, निराशावादी काव्य, वर्ग–संघर्ष भावनायुक्त काव्य, राष्ट्रीय काव्यधारा, यथार्थवादी काव्य।

धर्म और आध्यात्मिकता की प्रतिकिया–

जिस उज्ज्वल, उत्कृष्ट और लोक–कल्याणकारी पृष्टभूमी पर वैदिक काल में धर्म के स्वरूप की कल्पना की गई थी, उसमें महाभारत काल के पश्चात विकृति आरम्भ हो गई। कर्म काण्ड के प्रवेश के साथ उसमें धर्म के नाम पर रूढ़ियों का समावेश हो गया था। मानव के उत्थान व समाज में वर्ग–चेतना उत्पन्न करने तथा शोषित वर्ग को संधर्ष करने के लिए सर्वप्रथम ईश्वर, धर्म, परलोक एवं भाग्य सम्बन्धी विचारों का उन्मूलन करना आवश्यक हो गया था।

प्रगतिवादी काव्यधारा की प्रवृतियाँ–

प्रगतिवादी काव्यधारा की प्रमुख प्रवृतियाँ इस प्रकार हैः–

शोषितों की दीनता का चित्रण–

प्रगतिवादी कविता का मूल केन्द्र शोषण की चक्की में पिसने वाला किसान, मजदूर, पिड़ित की दशा का प्रगतिवादी कवि ने सहानूभूतिपूर्ण चित्रण किया है। प्रगतिवादी कवि ने शोषित और शोषक का तुलनात्मक चित्र उपस्थित करके समाजिक विषमता का उद्घाटन किया है। दिनकर के शब्दों में–

श्वानों को मिलता दूध, वस्त्र
भूखे बालक अकुलाते हैं।
माँ की छाती से चिपक, ठिठुर
जाड़े की रात बिताते है।

शोषक वर्ग के प्रति घृणाः–

प्रगतिवादी काव्य में शोषक वर्ग को स्वार्थी, अन्यायी, निर्दयी, एवं कपटी कहा गया है। शोषक वर्ग के अन्तर्गत व्यापारियों, जमीदारों, उद्योगपतियों को लिया गया है। ये लोग स्वार्थ सिद्धि के लिए पूँजीवादी व्यवस्था बनाए रखना चाहते है और जब तक पूँजीवादी व्यवस्था बनी रहेगी तबतक शोषण का अन्त असम्भव है। प्रगतिवादी अब इस व्यवस्था को भंग कर देना चाहते हैं–

''हो यह समाज चिथड़े–चिथड़े।
शोषण पर जिसकी नीव पड़ी हो''।

धर्म और ईश्वर के प्रति अनास्थाः–

प्रगतिवादी धर्म और ईश्वर में विश्वास नहीं करता। वह इन्हे शोषण का हथियार मानता है। दिनकर जी ने कुरूक्षेत्र में लिखा हैः–

''भाग्यवाद आवरण पाप का और शस्त्र शोषण का।
जिससे रखता दबा एक जन भाग दूसरे जन का।।''

इसलिए प्रगतिवादी कवि ने धार्मिक विश्वासों एवं रूढ़ियों को तोड़कर विप्लव के गीत गाए हैं। वह चाहता है कि क्रान्ति की चिनगारी उन रूढ़ियों को जलाकर राख कर दे–

''कवि कुछ ऐसी तान सुनाओं,
जिससे उथल–पुथल मच जाए।
एक हिलोर इधर से आए,
एक हिलोर उधर से आए।।''

रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' तो ईश्वर की धारणा पर हीं प्रश्न चिन्ह हीं लगा दिया हैं–

''जिसका ले ले नाम युगों से मांस लुताते तूम रोए।
किन्तु न चेता जो निशि वासर और क्षुधातुर तुम सोए।।''

क्रांति की भावना–

समाजिक समता के लिए मार्क्सवाद में क्रांति का समर्थान किया गया है। प्रगतिवादी कवियों ने भी प्राचिन परम्पराओं का समूल विनाश क्रांति के द्वारा हीं सम्भव माना है, वह चाहता है कि पुँजीपतियों के गगनचुम्बी इमारत भूमिसात हो जाए और सबको न्याय मिल सके। प्रगतिवादी कवि ने हिंसा को उचित ठहराया है–

''काटो–काटो काटो कर लो,
साइत और कुसाइत क्या है।
मारो–मारो मारो हसियाँ
हिंसा और अहिंसा क्या है।।''

नारी चित्रण–

प्रगतिवादी कवि ने नारी के यथार्थ का चित्रण किया है, वह न तो कल्पना लोक की परी है और न हीं सौन्दर्य एवं उदात्त वृत्रियों की पराकाष्ठा, अपितु वह इसी लोक की मानवी है, जो रात–दिन पुरूष के साथ आर्थिक और समाजिक विषमताओं को झेलती है। निराला ने पत्थर तोड़ती हुई नारी का चित्रण किया है–

''वह तोड़ती पत्थर,
देखा उसे मैने इलाहाबाद के पथ पर।
गुरू हथौड़े हाथ,
करती बार–बार प्रहार,
सामने तरू मलिका अट्टालिका प्रकार।।''

समाजिक जीवन का यथार्थ चित्रण–

प्रगतिवादी कवियों की एक प्रमुख विशोषता यथार्थ के धरातल पर उतरकर काव्य की रचना करना है। उनकी रचनाओं में कल्पना रंचमात्र भी नही है। प्रगतिवादी कवियों ने काव्य में निम्न वर्ग का चित्रण किया है। जीवन में व्याप्त विषाद, भूख, गरीबी, बेरोजगारी और कठिनाईयों का यथार्थ चित्रण प्रगतिवादी साहित्य में हीं उपलब्ध होता है।

''ओ मजदूर ! ओ मजदुर !!

तू सब चिजों का कर्ता,
तू हीं सब चिजों से दूर,
ओ मजदूर ! ओ मजदूर !!''

शैलीगत विशेषताएँ–

प्रगतिवादी कवि की भाषा सरल है। शैली अलंकार विहीन है और मुक्त छन्दों का प्रयोग भी इन्होंने किया है। उसमें कहीं बनावट नहीं है। वह आम आदमी की भाषा है। पन्त जी लिखते हैं–

''तुम वहन कर सको जन–मन में मेरे विचार।
वाणी मेरी चाहिए तुम्हें क्या अलंकार।।''

नवीन सौन्दर्य दृष्टि–

प्रगतिवादी विचारधारा सौन्दर्य को रूमानी कल्पनाओं के बजाए जीवन से जोड़कर देखती है। वह अपने आस–पास के जन–जीवन में सौंदर्य खोजती है। सौन्दर्य व्यक्ति के हार्दिक आवेगों और मानसिक चेतना दोनों से संबंधित होता है। ये दोनों समाजिक संबंधों से नियंत्रित होती है। सौदंर्य को परिभाधित करते हुए मार्क्सवादी दार्शनिक एन0 जी0 चरनीशवस्की के शब्दों में ''मनुष्य को जीवन सबसे प्यारा है, इसीलिए सौदंर्य की यह परिभाषा अत्यंत संतोषजनक मालूम पड़ती है'': 'सौदर्य जीवन है।' इसीलिए प्रगतिवादी साहित्यकार जीवन के हर रूप में तथा उसे बेहतर बनाने के लिए होने वाले संघर्षो में सौंदर्य देखते है।

निष्कर्षः–

प्रगतिवाद ने अपनी सीमाओं के बावजूद हिन्दी काव्यधारा के विकास में एक बहुत हीं महत्वपूर्ण अध्याय जोड़ा है। उसने काव्य को व्यक्तिवादी यथार्थ के बन्द कमरे से निकाल कर जनजीवन के बीच प्रवाहित कर दिया है। प्रगतिवादी कवि ने जीवन और साहित्य के मूल्य, सौदर्यबोध और लक्ष्य को समाज के यथार्थ और उसकी रचना से जोड़ा, भाषा को कुहरे से निकालकर धरातल पर प्रतिष्ठित किया। इस काल में हमें वस्तुनिष्ठ वैज्ञानिक दृष्टि और यथार्थवादी चिंतन, द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद, पूँजीवाद, सामन्तवाद का विरोध, समाजिक विषमता के प्रति विद्रोह और क्रांति, वर्ग विहीन समाज की स्थापना और समतावाद, दलितवर्गो के प्रति सहानुभूति और करूणा, सौन्दर्य के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण, प्रेम निरूपण, धर्म और अध्यात्म का विरोध, छायावादी भावोच्छवास का विरोध और जनभाषा का प्रयोग आदि प्रवृतियाँ दिखाई देती है। इसके अन्तर्गत समाज की आर्थिक दुरावस्था, सम्राज्यवादी, सामान्तवादी और पूँजीवादी तत्वों द्वारा शोषित कृषक, श्रमिक और अन्य दलित वर्गो की दयनिय स्थिति, बलिदान तथा क्रांति की भावना, पूँजीवादी समाज व्यवस्था के परिवर्तन की पुकार, नव समाजवादी व्यवस्था के निर्माण की तड़प आदि ने स्वभावतः इस काव्य धारा में स्थान ग्रहण किया है।

सन्दर्भ ग्रंथसूचीः–

1. डॉ0 नागेन्द्र व डॉ0 हरदयाल, ''हिन्दी साहित्य का इतिहास'' पृष्ठ–607, 69वाँ संस्करण, 2019 प्रकाशकः मयूर बुक्स, नई दिल्ली–110002
2. वही–608
3. डॉ0 गणपति चन्द्रगुप्त, 'हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास' ,पृष्ठ–742
4. डॉ0 हरिश्चन्द्र वर्मा, डॉ0 रामनिवास गुप्त ''हिन्दी साहित्य का इतिहास''–पृष्ठ–425
5. डॉ0 आशोक तिवारी ''हिन्दी, पृष्ठ–154 प्रकाशकः साहित्य भवन, आगरा
6. वही–155
7. डॉ0 कृष्णलाल 'हंस', 'प्रगतिवादी काव्य–साहित्य' पृष्ठ–77
8. डॉ0 नागेन्द्र ''आधुनिक साहित्य की मुख्य प्रवृतियाँ'' प्रकाशकः– नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली, तृतीय संस्करण–1976
9. आचार्य राम चन्द्र शुक्ल ''हिन्दी साहित्य का इतिहास'' प्रकाशकः– नागरी प्रचारिणी सभा काशी
10. डॉ0 नन्ददुलारे वाजपेयी, 'कवि निराला' प्रकाशक–वाणी वितान प्रकाशन–वाराणसी प्रथम संस्करण–1965